15

अंतर्राज्यीय संबंध (Inter-State Relations)

भारतीय संघीय व्यवस्था की सफलता मात्र केंद्र तथा राज्यों के सौहार्दपूर्ण संबंधों तथा घनिष्ठ सहभागिता पर ही नहीं अपितु राज्यों के अंतर्संबंधों पर भी निर्भर करती है। अत: संविधान ने अंतर्राज्यीय सौहार्द के संबंध में निम्न प्रावधान किए हैं:

1. अंतर्राज्यीय जल विवादों का न्याय-निर्णयन,
2. अंतर्राज्यीय परिषद द्वारा समन्वयता,
3. सार्वजनिक कानूनों, दस्तावेजों तथा न्यायिक प्रक्रियाओं को पारस्परिक मान्यता,
4. अंतर्राज्यीय व्यापार, वाणिज्य तथा समागम की स्वतंत्रता।

इसके अतिरिक्त संसद द्वारा अंतर्राज्यीय सहभागिता तथा समन्वयता को बढ़ाने के लिए क्षेत्रीय परिषदों का गठन किया गया है।

अंतर्राज्यीय जल विवाद

संविधान का अनुच्छेद 262 अंतर्राज्यीय जल विवादों के न्यायनिर्णयन से संबंधित है।

इसमें दो प्रावधान हैं:

(i) संसद कानून बनाकर अंतर्राज्यीय नदियों तथा नदी घाटियों के जल के प्रयोग, बंटवारे तथा नियंत्रण से संबंधित किसी विवाद पर शिकायत का न्यायनिर्णयन कर सकती है।

(ii) संसद यह भी व्यवस्था कर सकती है कि ऐसे किसी विवाद में न ही उच्चतम न्यायालय तथा न ही कोई अन्य न्यायालय अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करे।

इस प्रावधान के अधीन संसद ने दो कानून बनाए। [नदी बोर्ड अधिनियम (1956) तथा अंतर्राज्यीय जल विवाद अधिनियम (1956)]। नदी बोर्ड अधिनियम, अंतर्राज्यीय नदियों तथा नदी घाटियों के नियंत्रण तथा विकास के लिए नदी बोर्डों की स्थापना हेतु बनाया गया। नदी बोर्ड की स्थापना संबंधित राज्यों के निवेदन पर केंद्र सरकार द्वारा उन्हें सलाह देने हेतु की जाती है।

अंतर्राज्यीय जल विवाद अधिनियम, केंद्र सरकार को अंतर्राज्यीय नदी अथवा नदी घाटी के जल के संबंध में दो अथवा अधिक राज्यों के मध्य विवाद के न्यायनिर्णयन हेतु एक अस्थायी न्यायालय कि गठन की शक्ति प्रदान करता है। न्यायाधिकरण का निर्णय अंतिम तथा विवाद से संबंधित सभी पक्षों के लिए मान्य होता है। कोई जल विवाद जो इस अधिनियम के अंतर्गत ऐसे किसी न्यायाधिकरण के अधीन हो, उच्चतम न्यायालय तथा किसी दूसरे न्यायालय के अधिकार क्षेत्र से बाहर होता है।

अंतर्राज्यीय जल विवाद के निपटारे के लिए अतिरिक्त न्यायिक तंत्र की आवश्यकता इस प्रकार है:

तालिका 15.1 *अब तक गठित अंतर्राज्यीय जल विवाद न्यायाधिकरण*

क्र. नाम	स्थापना वर्ष	संबंधित राज्य
1. कृष्णा जल विवाद न्यायाधिकरण	1969	महाराष्ट्र, कर्नाटक एवं आंध्र प्रदेश।
2. गोदावरी जल विवाद न्यायाधिकरण	1969	महाराष्ट्र, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश एवं ओडीशा।
3. नर्मदा जल विवाद न्यायाधिकरण	1969	राजस्थान, गुजरात, मध्य प्रदेश एवं महाराष्ट्र।
4. रावी तथा व्यास जल विवाद न्यायाधिकरण	1986	पंजाब, हरियाणा एवं राजस्थान।
5. कावेरी जल विवाद न्यायाधिकरण	1990	कर्नाटक, केरल, तमिलनाडु एवं पुडुचेरी।
6. द्वितीय कृष्णा जल विवाद न्यायाधिकरण	2004	महाराष्ट्र, कर्नाटक एवं आंध्र प्रदेश।
7. वंशधारा जल विवाद न्यायाधिकरण	2010	ओडिशा एवं आंध्र प्रदेश
8. महादायी जल विवाद न्यायाधिकरण	2010	गोवा, कर्नाटक एवं महाराष्ट्र

''यदि जल विवादों से विधिक अधिकार या हित जुड़े हुये हैं तो उच्चतम न्यायालय को यह अधिकार है कि वह राज्यों के मध्य जल विवादों की स्थिति में उनसे जुड़े मामलों की सुनवाई कर सकता है। लेकिन इस संबंध में विश्व के विभिन्न देशों में यह अनुभव किया गया है कि जब जल विवादों में निजी हित सामने आ जाते हैं तो मुद्दे का संतोषजनक समाधान नहीं हो पाता है।''[1]

अब तक (2016) केंद्र सरकार आठ अंतर्राज्यीय जल विवाद न्यायाधिकरणों का गठन कर चुकी है। इन न्यायाधिकरणों के नाम, गठन का वर्ष एवं संबंधित राज्यों की सूची को तालिका संख्या 15.1 में दर्शाया गया है:

अंतर्राज्यीय परिषदें

अनुच्छेद 263 राज्यों के मध्य तथा केंद्र तथा राज्यों के मध्य समन्वय के लिए अंतर्राज्यीय परिषद के गठन की व्यवस्था करता है। इस प्रकार, राष्ट्रपति यदि किसी समय यह महसूस करे कि ऐसी परिषद का गठन सार्वजनिक हित में है तो वह ऐसी परिषद का गठन करता है। राष्ट्रपति ऐसी परिषद के कर्तव्यों, इसके संगठन और प्रक्रिया को परिभाषित (निर्धारित) कर सकता है।

यद्यपि राष्ट्रपति को अंतर्राज्यीय परिषद के कर्त्तव्यों के निर्धारण की शक्ति प्राप्त है तथापि अनुच्छेद 263 निम्नानुसार इसके कर्तव्यों को उल्लेख करता है:

(अ) राज्यों के मध्य उत्पन्न विवादों की जांच करना तथा ऐसे विवादों पर सलाह देना।

(ब) उन विषयों पर, जिनमें राज्यों अथवा केंद्र तथा राज्यों का समान हित हो, अन्वेषण तथा विचार-विमर्श करना।

(स) ऐसे विषयों तथा विशेष तौर पर नीति तथा इसके क्रियान्वयन में बेहतर समन्वय के लिए संस्तुति करना।

परिषद के अंतर्राज्यीय विवादों पर जांच करने तथा सलाह देने के कार्य उच्चतम न्यायालय के अनुच्छेद (131) के अंतर्गत सरकारों के मध्य कानूनी विवादों के निर्णय के अधिकार क्षेत्र के सम्पूरक हैं। परिषद किसी विवाद, चाहे कानूनी अथवा गैर-कानूनी का निष्पादन कर सकती है, किंतु इसका कार्य सलाहकारी है न कि न्यायालय की तरह अनिवार्य रूप से मान्य निर्णय।[2]

अनुच्छेद 263 के उपरोक्त उपबंधों के अंतर्गत राष्ट्रपति संबंधित विषयों पर नीतियों तथा उनके क्रियान्वयन में बेहतर समन्वय के लिए निम्न परिषदों का गठन कर चुका है:

- केंद्रीय स्वास्थ्य परिषद।
- केंद्रीय स्थानीय सरकार तथा शहरी विकास परिषद[3]।
- बिक्री कर हेतु उत्तरी, पूर्वी, पश्चिमी तथा दक्षिणी क्षेत्रों के लिए चार क्षेत्रीय परिषदें।

भारतीय दवा की केंद्रीय परिषद तथा होम्योपैथी की क्षेत्रीय परिषद का गठन संसद के अधिनियम के अंतर्गत किया गया था।[4]

अंतर्राज्यीय परिषद की स्थापना

केंद्र तथा राज्य संबंधों से संबंधित सरकारिया आयोग (1983-87) ने संविधान के अनुच्छेद 263 के अंतर्गत नियमित अंतर्राज्यीय परिषद की स्थापना के लिए सशक्त सुझाव दिए। इसने संस्तुति की

कि अंतर्राज्यीय परिषद को इसी अनुच्छेद 263 के अधीन बनी अन्य संस्थाओं से अलग करने के लिए इसे अंतर्सरकारी परिषद कहना आवश्यक है। आयोग ने संस्तुति की कि परिषद को अनुच्छेद 263 की उपधारा (ख) तथा (ग) में वर्णित कार्यों की जिम्मेदारी दी जानी चाहिए।

सरकारिया आयोग की उपरोक्त सिफारिशों को मानते हुए, वी.पी. सिंह के नेतृत्व वाली जनता दल सरकार ने 1990[5] में अंतर्राज्यीय परिषद का गठन किया। इसमें निम्न सदस्य थे:

(i) अध्यक्ष—प्रधानमंत्री।
(ii) सभी राज्यों के मुख्यमंत्री।
(iii) विधानसभा वाले केन्द्र शासित प्रदेशों के मुख्यमंत्री।
(iv) उन केन्द्र शासित प्रदेशों के प्रशासक जहां विधानसभा नहीं है।
(v) राष्ट्रपति शासन वाले राज्यों के राज्यपाल
(vi) प्रधानमंत्री द्वारा नामित छह केंद्रीय कैबिनेट मंत्री (गृह मंत्री सहित)।

परिषद के अध्यक्ष (प्रधानमंत्री) द्वारा निमित पांच कैबिनेट मंत्री/राज्य मंत्री (स्वतंत्र प्रभार) परिषद के स्थायी आमंत्रित सदस्य होते हैं।

यह परिषद अंतर्राज्यीय, केंद्र-राज्य तथा केंद्र-केन्द्र शासित प्रदेशों से संबंधित विषयों पर संस्तुति करने वाला निकाय है। इसका उद्देश्य ऐसे विषयों पर इनके मध्य परीक्षण, विचार-विमर्श तथा सलाह से समन्वय को बढ़ावा देना है। विस्तारपूर्वक इसके कार्य निम्न हैं:

- ऐसे विषयों पर अन्वेषण तथा विचार विमर्श करना जिनमें राज्यों अथवा केंद्र का साझा हित निहित हो;
- इन विषय पर नीति तथा इसके क्रियान्वयन में बेहतर समन्वय के लिए संस्तुति करना, तथा;
- ऐसे दूसरे विषयों पर विचार-विमर्श करना जो राज्यों के सामान्य हित में हों और अध्यक्ष द्वारा इसे सौंपे गए हों।

परिषद की एक वर्ष में कम-से-कम तीन बैठकें होनी चाहिए। इसकी बैठकें पारदर्शी होती हैं तथा प्रश्नों पर निर्णय एकमत से होता है।

परिषद् की एक स्थायी समिति भी होती है। इसकी स्थापना 1996 में परिषद के विचारार्थ मामलों पर सतत् चर्चा के लिए की गई थी। इसमें निम्नलिखित सदस्य होते हैं:

(i) केन्द्रीय गृहमंत्री, अध्यक्ष के रूप में
(ii) पाँच केन्द्रीय कैबिनेट मंत्री
(iii) नौ मुख्यमंत्री

परिषद् के सहायतार्थ एक सचिवालय होता है जिसे अन्तर-राज्य परिषद सचिवालय कहा जाता है। इसकी स्थापना 1991 में की गई थी और इसका प्रमुख भारत सरकार का एक सचिव होता है। 2011 से यह सचिवालय क्षेत्रीय परिषदों के सचिवालय के रूप में भी कार्य कर रहा है।

लोक अधिनियम, दस्तावेज तथा न्यायिक प्रक्रियाएं

संविधान के अनुसार, प्रत्येक राज्य का अधिकार क्षेत्र उसके अपने राज्य क्षेत्र तक ही सीमित है। अत: यह संभव है कि एक राज्य के कानून और दस्तावेज दूसरे राज्यों में अमान्य हों। ऐसी परेशानियों को दूर करने के लिए संविधान में 'पूर्ण विश्वास तथा साख' उप-वाक्य है, जो इस प्रकार वर्णित है:

(i) केंद्र तथा प्रत्येक राज्य के लोक अधिनियमों, दस्तावेजों तथा न्यायिक प्रक्रियाओं को संपूर्ण भारत में पूर्ण विश्वास तथा साख प्रदान की गई है। लोक अधिनियम में सरकार के विधायी तथा कार्यकारी दोनों कानून निहित हैं। सार्वजनिक दस्तावेज में कोई आधिकारिक पुस्तक, रजिस्टर अथवा किसी लोकसेवक द्वारा अपने आधिकारिक कार्यों के निर्वाह में बनाए गए दस्तावेज शामिल हैं।

(ii) ऐसे अधिनियम, रिकॉर्ड तथा कार्यवाहियां जिस प्रकार और जिन परिस्थितियों में सिद्ध की जाती हैं तथा उनके प्रभाव का निर्धारण किया जाता है, संसद द्वारा नियम बनाकर प्रदान की जाएंगी। इसका अर्थ हैं कि उपरोक्त वर्णित सामान्य नियम के प्रमाण को प्रस्तुत करने तथा ऐसे अधिनियम, रिकॉर्ड तथा कार्यवाही का, एक राज्य का दूसरे राज्य पर प्रभाव, संसद के विशेषाधिकार से संबंधित है।

(iii) भारत के किसी भी भाग में दीवानी न्यायालय की आज्ञा तथा अंतिम निर्णय प्रभावी होगा (इस न्यायिक निर्णय पर बिना किसी नए मुकदमे की आवश्यकता के)। यह

नियम केवल दीवानी निर्णय पर लागू होता है तथा फौजदारी निर्णयों पर लागू नहीं होता। दूसरे शब्दों में, किसी राज्य के न्यायालयों को दूसरे राज्य के दंड के नियमों को क्रियान्वित करने की आवश्यकता नहीं है।

अंतर्राज्यीय व्यापार तथा वाणिज्य

संविधान के भाग XIII के अनुच्छेद 301 से 307 में भारतीय क्षेत्र में व्यापार, वाणिज्य तथा समागम का वर्णन है।

अनुच्छेद 301 घोषणा करता है कि संपूर्ण भारतीय क्षेत्र में व्यापार, वाणिज्य तथा समागम स्वतंत्र होगा। इस प्रावधान का उद्देश्य राज्यों के मध्य सीमा अवरोधों को हटाना तथा देश में व्यापार, वाणिज्य तथा समागम के अबाध प्रवाह को प्रोत्साहित करने हेतु एक इकाई बनाना है। इस प्रावधान में स्वतंत्रता अंतर्राज्यीय व्यापार, वाणिज्य तथा समागम तक ही सीमित नहीं है बल्कि इसका विस्तार राज्यों के भीतर व्यापार, वाणिज्य तथा समागम पर भी है। अतः यदि किसी राज्य की सीमा पर या पहले अथवा बाद के स्थानों पर प्रतिबंध लगाए जाते हैं तो यह अनुच्छेद 301 का उल्लंघन होगा।

अनुच्छेद 301 द्वारा दी गई स्वतंत्रता संविधान द्वारा स्वयं अन्य प्रावधानों (संविधान के भाग III अनुच्छेद 302 से 305) द्वारा लगाए गए प्रतिबंधों को छोड़कर सभी प्रतिबंधों से स्वतंत्र है, इसे इस प्रकार से समझाया जा सकता है:

(i) संसद सार्वजनिक हित में राज्यों के मध्य अथवा किसी राज्य के भीतर व्यापार, वाणिज्य तथा समागम की स्वतंत्रता पर प्रतिबंध लगा सकती है किंतु संसद एक राज्य को दूसरे राज्य पर प्राथमिकता नहीं दे सकती अथवा भारत के किसी भाग में वस्तुओं की कमी की स्थिति को छोड़कर राज्यों के मध्य विभेद नहीं कर सकती।[6]

(ii) किसी राज्य की विधायिका सार्वजनिक हित में उस राज्य अथवा उस राज्य के अंदर व्यापार, वाणिज्य तथा समागम की स्वतंत्रता पर उचित प्रतिबंध लगा सकती है किंतु इस उद्देश्य हेतु विधेयक विधानसभा में राष्ट्रपति की पूर्व अनुमति से ही पेश किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त राज्य विधायिका एक राज्य को दूसरे पर प्राथमिकता नहीं दे सकती अथवा राज्यों के मध्य विभेद नहीं कर सकती।

(iii) किसी राज्य की विधायिका दूसरे राज्य अथवा संघ राज्य से आयातित उन वस्तुओं पर कर लगा सकती है जो उस संबंधित राज्य में उत्पादित होते हैं। यह प्रावधान राज्यों द्वारा विभेदकारी करों के लगाने का निषेध करता है।

(iv) स्वतंत्रता (अनुच्छेद 301 के अंतर्गत) राष्ट्रीयकृत विधियों के अधीन है (वे विधियां जो केंद्र अथवा राज्यों के पक्ष में एकाधिकार के लिए पूर्वनिर्दिष्ट हैं)। इस प्रकार, संसद अथवा राज्य विधायिका संबंधित सरकार द्वारा

तालिका 15.2 *क्षेत्रीय परिषदों पर एक नजर*

	नाम	सदस्य	मुख्यालय
1.	उत्तर क्षेत्रीय परिषद्	पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान, दिल्ली, चंडीगढ़ तथा जम्मू-कश्मीर।	नयी दिल्ली
2.	मध्य क्षेत्रीय परिषद्	मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड एवं छत्तीसगढ़।	इलाहाबाद
3.	पूर्वी क्षेत्रीय परिषद	बिहार, पश्चिम बंगाल, ओड़ीशा।	कोलकाता
4.	पश्चिमी क्षेत्रीय परिषद्	महाराष्ट्र, गुजरात, गोवा, दमन एवं दीव तथा दादरा तथा नगर हवेली।	मुंबई
5.	दक्षिणी क्षेत्रीय परिषद्	कर्नाटक, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, केरल तथा पुडुचेरी।	चेन्नई

किसी व्यापार, व्यवसाय, उद्योग अथवा सेवा को जिसमें सामान्य नागरिक शामिल न हो, शामिल हो अथवा आंशिक रूप से शामिल हो या नहीं हो, जारी रखने के लिए कानून बना सकती है।

संसद व्यापार, वाणिज्य तथा समागम की स्वतंत्रता को आगे बढ़ाने के उद्देश्य से उचित प्राधिकरण की नियुक्ति कर सकती है तथा इसे प्रतिबंधित भी कर सकती है। संसद इस प्राधिकरण को आवश्यक शक्ति तथा कार्य दे सकती है किंतु अभी तक ऐसे किसी प्राधिकरण का गठन नहीं किया गया है।[7]

क्षेत्रीय परिषदें

क्षेत्रीय परिषदें सांविधिक निकाय हैं (न कि सांविधानिक)। इसका गठन संसद द्वारा अधिनियम बनाकर किया गया है, जो कि राज्य पुनर्गठन अधिनियम 1956 है। इस कानून ने देश को पांच क्षेत्रों में विभाजित किया है। (उत्तरी, मध्य-पूर्वी, पश्चिमी तथा दक्षिणी) तथा प्रत्येक क्षेत्र के लिए एक क्षेत्रीय परिषद का गठन किया है।

जब ऐसे क्षेत्र बनाए जाते हैं तो कई चीजों को ध्यान में रखा जाता है, जिसमें सम्मिलित हैं—देश का प्राकृतिक विभाजन, नदी तंत्र तथा संचार के साधन, सांस्कृतिक तथा भाषायी संबंध तथा आर्थिक विकास की आवश्यकता, सुरक्षा तथा कानून और व्यवस्था।

प्रत्येक क्षेत्रीय परिषद में निम्नलिखित सदस्य होते हैं। (अ) केंद्र सरकार का गृहमंत्री, (ब) क्षेत्र के सभी राज्यों के मुख्यमंत्री, (स) क्षेत्र के प्रत्येक राज्य से दो अन्य मंत्री (द) क्षेत्र में स्थित प्रत्येक केन्द्र शासित प्रदेश के प्रशासक। इसके अतिरिक्त निम्नलिखित व्यक्ति क्षेत्रीय परिषद से सलाहकार (बैठक में बिना मताधिकार के) के रूप में संबंधित हो सकते हैं:

(i) योजना आयोग द्वारा मनोनीत व्यक्ति, (ii) क्षेत्र में स्थित प्रत्येक राज्य सरकार के मुख्य सचिव, (iii) क्षेत्र के प्रत्येक राज्य के विकास आयुक्त।

केंद्र सरकार का गृहमंत्री पांचों क्षेत्रीय परिषदों का अध्यक्ष होता है। प्रत्येक मुख्यमंत्री क्रमानुसार एक वर्ष के समय के लिए परिषद के उपाध्यक्ष के रूप में कार्य करता है।

क्षेत्रीय परिषदों का उद्देश्य राज्यों, केन्द्र शासित प्रदेशों तथा केंद्र के बीच सहभागिता तथा समन्वयता को बढ़ावा देना है। ये आर्थिक तथा सामाजिक योजना, भाषायी अल्पसंख्यक, सीमा विवाद, अंतर्राज्यीय परिवहन आदि जैसे संबंधित विषयों पर विचार-विमर्श तथा संस्तुति करती हैं। ये केवल चर्चात्मक तथा परामर्शदात्री निकाय हैं।

क्षेत्रीय परिषदों के उद्देश्य (अथवा कार्य) विस्तारपूर्वक निम्नलिखित हैं:

- भावुकतापूर्ण देश का एकीकरण प्राप्त करना।
- तीक्ष्ण राज्य-भावना, क्षेत्रवाद, भाषायी तथा विशेषतावाद के विकास को रोकने में सहायता करना।
- विभाजन के बाद के प्रभावों को दूर करना ताकि पुनर्गठन, एकीकरण तथा आर्थिक विकास की प्रक्रिया एक साथ चल सके।
- केंद्र तथा राज्यों को सामाजिक तथा आर्थिक विषयों पर एक दूसरे की सहायता करने में तथा एक समान नीतियों के विकास के लिए विचारों तथा अनुभवों के आदान-प्रदान में सक्षम बनाना।
- मुख्य विकास योजनाओं के सफल तथा तीव्र क्रियान्वयन के लिए एक-दूसरे की सहायता करना।
- देश के अलग-अलग क्षेत्रों के मध्य राजनैतिक साम्य सुनिश्चित करना।

पूर्वोत्तर परिषद

उपरोक्त क्षेत्रीय परिषदों के अतिरिक्त एक पूर्वोत्तर परिषद का गठन एक अलग संसदीय अधिनियम—पूर्वोत्तर परिषद अधिनियम 1971[8] द्वारा किया गया है। इसके सदस्यों में असम, मणिपुर, मिजोरम, अरुणाचल प्रदेश, नागालैंड, मेघालय, त्रिपुरा तथा सिक्किम सम्मिलित हैं[9]। इसके कार्य कुछ अतिरिक्त कार्यों सहित वही हैं जो क्षेत्रीय परिषदों के हैं। यह एक एकीकृत तथा समन्वित क्षेत्रीय योजना बनाती हैं, जिसमें साझे महत्व के विषय सम्मिलित हों। इसे समय-समय पर सदस्य राज्यों द्वारा क्षेत्र में सुरक्षा तथा सार्वजनिक व्यवस्था के रख-रखाव के लिए उठाए गए कदमों की समीक्षा करनी होती है।

तालिका 15.3 *अंतर्राज्यीय संबंधी अनुच्छेद, एक नजर में*

अनुच्छेद	विषय-वस्तु
	लोक लेखा की पारस्परिक मान्यता, आदि
261	लोक लेखा, अभिलेख तथा न्यायिक प्रक्रिया।
	जल सम्बन्धी-विवाद
262	अंतर-राज्यीय नदियों-अथवा नदी घाटियों के जल से सम्बन्धित विवादों के न्याय निर्णय।
	राज्यों के बीच समन्वय
263	अन्तर-राज्य परिषद से सम्बन्धित प्रावधान।
	अंतर-राज्य व्यापार एवं वाणिज्य
301	व्यापार-वाणिज्य तथा व्यावहारिक लेन-देन।
302	व्यापार, वाणिज्य तथा व्यावहारिक लेन-देन पर प्रतिबंध की संसद की शक्तियाँ।
303	व्यापार एवं वाणिज्य के संबंध में केन्द्र तथा राज्यों की विधायी शक्तियों पर प्रतिबंध।
304	राज्यों के बीच व्यापार, वाणिज्य एवं व्यावहारिक लेन-देन पर प्रतिबंध।
305	पहले से लागू कानूनों तथा राज्य के एकाधिकारों से संबंधित कानूनों की सुरक्षा।
306	पहली अनुसूची के भाग-बी में कतिपय राज्यों द्वारा व्यापार एवं वाणिज्य पर प्रतिबंध लगाने की शक्ति (निरस्त)।
307	अनुच्छेद 301 से 304 तक सन्निहित उद्देश्यों को आगे बढ़ाने के लिए प्राधिकार की नियुक्ति।

संदर्भ सूची

1. संयुक्त संसदीय समिति की रिपोर्ट। भारत की भविष्य की सरकार के बारे में हाउस ऑफ लाड्र्स एवं हाउस ऑफ कॉमन की प्रवर समिति।
2. एम.पी. जैन: *इंडियन कांस्टीट्यूशनल लॉ,* वधवा, चौथा संस्करण, पृष्ठ-382
3. इसे मूलत: स्थानीय स्वशासन की केन्द्रीय परिषद (1954) के रूप में जाना जाता था।
4. इंडिया 2003, पृष्ठ 242
5. अंतर्राज्यीय परिषद आदेश दिनांक 28 मई 1990
6. उदाहरण के लिए संसद ने आवश्यक वस्तु अधिनियम (1955) बनाया। इस अधिनियम ने केन्द्र सरकार को कुछ आवश्यक वस्तुओं, जैसे-पेट्रोलियम, कोयला, लोहा एवं इस्पात आदि के उत्पादन-आपूर्ति एवं वितरण पर नियंत्रण का अधिकार दिया।
7. अमेरिका में ऐसे प्राधिकरणों को अंतर्राज्यीय वाणिज्य आयोग कहा जाता है।
8. यह 8 अगस्त, 1972 को अस्तित्व में आया।
9. 1994 में सिक्किम पूर्वोत्तर परिषद का आठवां सदस्य बना।